॥श्रीश्रीगुरु गौराङ्गौ जयतः॥

समस्त ब्रह्माण्डके परिचालक तथा सभी देव-देवीगणके नित्य आराध्य एवं हमारी गुरुपरम्पराके मूल 'गुरु' परमेश्वर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र हैं। कपट-पूर्ण कलह-प्रवण कलियुगसे जीवोंका उद्धार कराने हेतु श्रीकृष्णचन्द्रने ही इस धराधाममें निजधाम एवं पार्षदगण सहित श्रीधाम मायापुरमें भक्त-रूप ग्रहणकर, श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु नाम धारणकर, प्रत्येक नगर एवं ग्राममें श्रीकृष्ण महामन्त्रकी महिमाका व्यापक रूपमें प्रचार किया। यही हरे कृष्ण महामन्त्र अर्थात् हरिनाम प्रत्येक जीवको नित्य आनन्दमय धाम श्रीगोलोक वृन्दावन ले जानेके लिये एकमात्र मन्त्र है। हम सभी इस आनन्दके सन्धानमें अपने जीवनके प्रत्येक मुहूर्त्तको नियोग कर रहे हैं। किन्तु मायाका प्रभाव इतने प्रबलरूपसे हमपर आक्रमण कर रहा है कि हम लोग आलस्यको प्रश्रय देकर स्वेच्छासे नाना प्रकारकी युक्तियों द्वारा हरे कृष्ण महामन्त्र उच्चारण न करनेके लिये स्वयंको समझा लेते हैं और हरिनाम उच्चारण करनेके स्थानपर जड़ीय नाम-प्रतिष्ठाको प्राप्त करनेके लिये स्वयंके जीवनको उत्सर्ग कर रहे हैं। यह मायाका प्रभाव हमें पुनः-पुनः कह रहा है कि यह जड़ीय नाम-प्रतिष्ठा ही नित्य आनन्द प्राप्त करनेका मार्ग है। इसी मायाके प्रभावसे हम अपने सम्पूर्ण प्रयासोंको इन जड़ीय अभिलाषाओंको पूर्ण करने हेतु नियुक्त कर रहे हैं। एक पथिक जिस प्रकार मरुभूमिमें जलके अन्वेषण हेतु मरिचिकाके(दूर भूमिमें जलका भ्रम) पीछे धावित होता है, किन्तु निकट पहुँचनेपर उसे यह अनुभव होता है कि वह जल नहीं, अपितु उसका केवल भ्रम था। इस प्रकार अन्ततः जलके अभावके कारण वह इसी मरुभूमिमें अमूल्य देव-दुर्लभ मनुष्य देहको त्याग करनेके लिये बाध्य हो जाता है। इसी अनुरूप हम भी नित्य आनन्दके सन्धानमें माया-मरुमें पड़कर लाभ-प्रतिष्ठा रूपी मरीचिकाके पीछे धावित हो रहे हैं।

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रचारित हरे कृष्ण महामन्त्र हमारे शुष्क हृदय रूपी मरुमें अमृतरसका वर्षण करता है। इस रसास्वादनकी उपलब्धि वे ही लोग कर सकते हैं, जो गौड़ीय परम्परामें युक्त हो आनुगत्य स्वीकार करते हुये चातक पक्षीके न्यायानुसार अन्य जल पान न करें। अर्थात् केवल मात्र स्वाति नक्षत्रका जल पानकी अपेक्षा रखने वाले भक्त-चातक होते हैं, जड़ लाभ-पूजा-प्रतिष्ठाके इच्छुक नहीं और वे भक्त केवल दिव्य गोलोक धाममें प्रत्यावर्त्तन करनेकी अभिलाषासे ही यह हरिनाम ग्रहण करते हैं। यह भक्त-चातक बननेका लोभ हमारे हृदयमें तभी उदित होगा जब हम दीक्षा गुरुके आनुगत्यमें समस्त गुरुपरम्पराकी सेवा उत्साह सहित करेंगे। इसी उत्साहको प्रदान करते हेतु समस्त गौड़ीय मठके प्रतिष्ठानके प्रतिष्ठाताचार्य हमारे परम गुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट श्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुरके स्नेहाभिषिक्त मेरे गुरु पादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट १०८ श्रीश्रीमद्भक्ति प्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजने श्रीगोपीनाथ गौड़ीय मठकी स्थापना की। किन्तु हमारा उत्साह किस दिन शिथिल होता है, एकमात्र हम स्वयं इसका अनुमान लगा सकते हैं।

यदि हमारा हृदय भक्त चातककी भाँति हरिनाम रसास्वादनमें उत्साहित नहीं होता, तब हमें अपने हृदयके अन्तःकरणमें स्थित गुरु परम्पराके आनुगत्यमें परमेश्वर भगवान् श्रीकृष्णको पुकारना चाहिये। अतिशीघ्र ही श्रीभगवान् हमारे निकट गुरुरूप अथवा शास्त्र रूपमें उपस्थित हो जायेंगे और हमारे इस शुष्क हृदय रूपी मरुभूमिमें हरिनामामृत रसास्वादनका उपाय जनायेंगे।

भक्त-कृष्णरूप हन शास्त्रेर प्रमाणे।
गुरुरूपे कृष्ण कृपा करेन भक्तगणे॥

उपरोक्त श्रीचैतन्य चरितामृत ग्रन्थके इस निर्देशका अवलम्बनकर हम श्रीगुरुदेवको श्रीकृष्णके अभिन्न प्रकाश विग्रहके रूपमें दर्शन करते हैं। श्रीगुरुमें गुरुत्त्व तबतक प्रतीत होता है जबतक श्रीगुरुदेव गुरु-परम्पराके दासानुदासके रूपमें स्वयंको श्रीकृष्णसेवामें सर्वक्षण नियुक्त रखते हैं। अन्यथा श्रील प्रभुपादकी भाषामें उस

'गुरु' शब्दके प्रथम अक्षर 'उ'का वास्तविक तात्पर्य लोप हो जाता है।

आज अर्थात् श्रीगौर चतुदर्शीके दिन आप लोगोंने जो मुझे गौरव प्रदान करनेके लिये और मेरे पारमार्थिक कल्याणकी प्रार्थना करने हेतु जो अनुष्ठान किया है, आप सभीके निकट मेरा यह अनुरोध है आप गुरुपरम्परा अर्थात् श्रीव्यासपूजा करें तथा मेरे लिये गुरुपरम्पराके निकट यह प्रार्थना निवेदन करें कि मैं वास्तविक रूपमें गुरुदास अर्थात् श्रील भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजजीका दास बन सकूँ।

श्रीगोपीनाथ गौड़ीय मठके प्रतिष्ठाता मेरे श्रीगुरुदेवकी वैष्णव-आचरणके अलङ्कार स्वरूप 'दैन्यता' वर्तमान गौड़ीय गगनमें एक उज्ज्वल दृष्टान्त है। श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ प्रतिष्ठानके वर्तमान आचार्य श्रील भक्तिबल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज तथा अन्यान्य श्रीवैष्णगणके मुखनिसृत वाणी है—"श्रील पुरी गोस्वामी महाराज श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु द्वारा रचित श्रीशिक्षाष्टकके तृतीय श्लाकके मूर्त्तिमान विग्रह हैं।"
श्रीशिक्षाष्टका तृतीय श्लोक इस प्रकार है—

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः॥

अर्थात् सर्वपद-दलित अत्यन्त तुच्छ तृणसे भी अपनेको दीन-हीन नीच समझकर, वृक्षसे भी अधिक सहनशील बनकर, स्वयं अमानी होकर, दूसरोंको यथायोग्य मान देनेवाला बनकर सदा सर्वदा-निरन्तर श्रीहरिनामसङ्कीर्त्तन करता रहे।

वैष्णव गुणावलीका संक्षिप्त सार है—दैन्यता, सहिष्णुता, स्वयं अमानी होकर सबको मान प्रदान करना और सर्वदा उल्लास सहित हरिनाम सङ्कीर्त्तन करना।

हम लोग जो श्रीगोपीनाथ गौड़ीय मठके अनुगामीके रूपमें स्वयंका परिचय देते हैं, हम सभीको उपरोक्त वैष्णवके मुख्य चार गुण, जिनका मेरे श्रीगुरुदेवने स्वयं आचरणकर जीवनादर्शकी शिक्षा प्रदान की, उन गुणोंको अपने जीवनकी प्रत्येक स्थितिमें पालन करना चाहिये। यदि हम इस आदर्शको अपने जीवनमें स्थापन करते हैं, तभी वास्तविक रूपमें हम श्रीगुरुदेवके अनुगामीके रूपमें स्वयंका परिचय प्रदान कर सकते हैं। दूसरी भाषामें तभी हम वास्तविक गुरुसेवक बन सकते हैं।

इस कलियुगके प्रभावसे प्रभावित हो प्रायः सभी हमारे श्रील गुरुपादपद्म द्वारा आचरित वैष्णव आचरणको स्वयंके जीवनमें पालन करनेमें असमर्थ हो रहे हैं। श्रील प्रभुपादकी वाणीसे हम यह जान सकते हैं—"जिस मुहूर्त्तमें जितने परिमाणमें हम श्रीगुरुपादपद्मसे स्वयंको दूर करेंगे, उतने ही परिमाणमें इस जड़ जगतका आकषर्ण हमारा पोषण करेगा।"

जड़ जगतका आकर्षण है—लोक मनोरञ्जन द्वारा लाभ-पूजा-प्रतिष्ठा प्राप्त करनेकी स्पृशा। मेरा आप सभीके निकट यह विनम्र निवेदन है कि आप इस अनुष्ठानके यथार्थ उद्देश्यको समझें। आजका यह अनुष्ठान किसी लोक रञ्जनके लिये नहीं है। यह केवल श्रीराधा-कृष्णके रञ्जन हेतु अनुष्ठित हुआ है।

मेरी इस लेखनीमें यदि कोई भूल दृष्टिगोचर हो तो मुझे निजगुणोंसे क्षमा करें और मुझपर यह आशीर्वाद करें कि मैं श्रीचैतन्य महाप्रभुके प्रेमधर्मको शुद्धता सहित आजीवन प्रचार कर सकूँ।

निवेदक
भक्तिविबुध बोधायन